Vol III Issue VIII Feb 2014

Impact Factor : 2.2052(UIF)

ISSN No :2231-5063

International Multidisciplinary Research Journal

Golden Research Thoughts

Chief Editor
Dr.Tukaram Narayan Shinde

Publisher
Mrs.Laxmi Ashok Yakkaldevi

Associate Editor
Dr.Rajani Dalvi

Honorary
Mr.Ashok Yakkaldevi

IMPACT FACTOR : 2.2052(UIF)

Welcome to GRT

RNI MAHMUL/2011/38595 **ISSN No.2231-5063**

Golden Research Thoughts Journal is a multidisciplinary research journal, published monthly in English, Hindi & Marathi Language. All research papers submitted to the journal will be double - blind peer reviewed referred by members of the editorial board.Readers will include investigator in universities, research institutes government and industry with research interest in the general subjects.

International Advisory Board

Flávio de São Pedro Filho
Federal University of Rondonia, Brazil

Kamani Perera
Regional Center For Strategic Studies, Sri Lanka

Janaki Sinnasamy
Librarian, University of Malaya

Romona Mihaila
Spiru Haret University, Romania

Delia Serbescu
Spiru Haret University, Bucharest, Romania

Anurag Misra
DBS College, Kanpur

Titus PopPhD, Partium Christian University, Oradea,Romania

Mohammad Hailat
Dept. of Mathematical Sciences, University of South Carolina Aiken

Abdullah Sabbagh
Engineering Studies, Sydney

Catalina Neculai
University of Coventry, UK

Ecaterina Patrascu
Spiru Haret University, Bucharest

Loredana Bosca
Spiru Haret University, Romania

Fabricio Moraes de Almeida
Federal University of Rondonia, Brazil

George - Calin SERITAN
Faculty of Philosophy and Socio-Political Sciences Al. I. Cuza University, Iasi

Hasan Baktir
English Language and Literature Department, Kayseri

Ghayoor Abbas Chotana
Dept of Chemistry, Lahore University of Management Sciences[PK]

Anna Maria Constantinovici
AL. I. Cuza University, Romania

Horia Patrascu
Spiru Haret University, Bucharest,Romania

Ilie Pintea,
Spiru Haret University, Romania

Xiaohua Yang
PhD, USA

.....More

Editorial Board

Pratap Vyamktrao Naikwade
ASP College Devrukh,Ratnagiri,MS India

R. R. Patil
Head Geology Department Solapur University,Solapur

Rama Bhosale
Prin. and Jt. Director Higher Education, Panvel

Salve R. N.
Department of Sociology, Shivaji University,Kolhapur

Govind P. Shinde
Bharati Vidyapeeth School of Distance Education Center, Navi Mumbai

Chakane Sanjay Dnyaneshwar
Arts, Science & Commerce College, Indapur, Pune

Awadhesh Kumar Shirotriya
Secretary,Play India Play,Meerut(U.P.)

Iresh Swami
Ex - VC. Solapur University, Solapur

N.S. Dhaygude
Ex. Prin. Dayanand College, Solapur

Narendra Kadu
Jt. Director Higher Education, Pune

K. M. Bhandarkar
Praful Patel College of Education, Gondia

Sonal Singh
Vikram University, Ujjain

G. P. Patankar
S. D. M. Degree College, Honavar, Karnataka

Maj. S. Bakhtiar Choudhary
Director,Hyderabad AP India.

S.Parvathi Devi
Ph.D.-University of Allahabad

Sonal Singh,
Vikram University, Ujjain

Rajendra Shendge
Director, B.C.U.D. Solapur University, Solapur

R. R. Yalikar
Director Managment Institute, Solapur

Umesh Rajderkar
Head Humanities & Social Science YCMOU,Nashik

S. R. Pandya
Head Education Dept. Mumbai University, Mumbai

Alka Darshan Shrivastava
Shaskiya Snatkottar Mahavidyalaya, Dhar

Rahul Shriram Sudke
Devi Ahilya Vishwavidyalaya, Indore

S.KANNAN
Annamalai University,TN

Satish Kumar Kalhotra
Maulana Azad National Urdu University

Address:-Ashok Yakkaldevi 258/34, Raviwar Peth, Solapur - 413 005 Maharashtra, India
Cell : 9595 359 435, Ph No: 02172372010 Email: ayisrj@yahoo.in Website: www.aygrt.isrj.net

Golden Research Thoughts
ISSN 2231-5063
Impact Factor : 2.2052(UIF)
Volume-3 | Issue-8 | Feb-2014
Available online at www.aygrt.isrj.net

राजतरंगिणी कालीन समाज की एक झलक

मनोज कुमार

(शोधार्थी) प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र।

सारांश **:-**प्राचीन भारत के साहित्यिक स्त्रोतों में राजतरंगिणी का नाम सबसे विश्वसनीय स्त्रोतों में लिया जाता है। यद्यपि इसके लेखक ने अपने पूर्वगामी इतिहासकारों की आलोचना करते हुए केवल अपनी ही रचना को एकमात्र प्रमाणिक ग्रंथ कहा है। इसमें कई प्रसंग और नामों का उल्लेख होने के साथ–साथ ऐसी उपेक्षणीय बातों का भी समावेश है कि ये सब इस ग्रंथ की प्रमाणिकता व उपयोगिता कम कर देते हैं। साथ ही इस ग्रंथ में प्रस्तुत काल गणना को भी सर्वथा संगत विश्वसनीय नहीं माना जा सकता, क्योंकि 12वीं सदी का कल्हण महाभारत काल से लेकर इस ग्रंथ को लिखने के समय तक के बीच हुऐ सभी कश्मीरी राजाओं का अपेक्षाकृत सर्वाधिक सुसंगत तथा क्रमबद्ध वर्णन करता है जबकि इतिहास की अन्य पुस्तक या प्रमाणों से इसकी पुष्टि नहीं की गई है। इसके बावजूद राजतरंगिणी की अपनी ऐतिहासिक महता है और तात्कालिक परिवेश का सबसे ठोस प्रमाण है जिसके आधार पर यहां समकालीन समाज का जिक्र किया जा रहा है ताकि तुलना करके हम अपने वर्तमान समाज की दशा व दिशा को समझ सकने में इसका प्रयोग कर सकें।

प्रस्तावना :

भारतीय सामाजिक इतिहास और संस्कृति का आधार सामाजिक संस्थाओं के योग से पल्लवित और पुष्पित हुआ है। प्रायः सभी देशों के सामाजिक जीवन भिन्न–भिन्न परिस्थितियों के कारण विभिन्न होते हैं। इस दृष्टि से भारत का सामाजिक जीवन भी अत्यंत वैविध्यपूर्ण है। इसी विविधता की एक झलक राजतरंगिणी कालीन समाज के माध्यम से यहां प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। इसके लिए तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था के विविध पहलुओं के प्रस्तुतीकरण के लिए 'राजतरंगिणी' को प्रधान स्त्रोत सामग्री के रूप में प्रयोग किया गया है। कहीं–कहीं तथ्यों की समानता, स्पष्टीकरण एवं तुलनात्मक दृष्टि के लिऐ अन्य समकालीन ग्रंथों का भी प्रयोग किया गया है। राजतरंगिणी से पहले प्राचीन भारत के अनेक स्त्रोतों को ऐतिहासिक ग्रंथो की श्रेणी में भले ही रखा जा सकता है, लेकिन इतिहास के दृष्टिकोण से केवल राजतरंगिणी ही इन स्त्रोतों में अव्वल ठहरता है।

इस ग्रंथ की यह विशेषता है कि इसमें जिन ऐतिहासिक घटनाओं का वर्णन है, वे बहुत कुछ ठीक हैं तथा उनका निरूपण एक क्रम तथा पद्धति के अनुसार हुआ है। कश्मीर का इतिहास जानने के लिऐ तो यह ग्रंथ अमूल्य साधन है। इस ग्रंथ की एक ओर विशेषता यह है कि इतिहास ग्रंथ होते हुऐ भी इसे एक उत्कृष्ट महाकाव्य कहा जा सकता है। राजतरंगिणी में राजनीतिक जीवन के साथ–साथ समाज की विभिन्न संस्थाओं पर भी प्रकाश डाला गया है, जिनमें वर्ण एवं जाति, आश्रम, दास प्रथा, अस्पृश्यता, शिक्षा, संस्कार, परिवार, विवाह, नारी की दशा आदि व्यवस्था व संस्थाऐं शामिल हैं। समाज के इन सभी पहलुओं की एक झलक आप आगे इस प्रकार देख सकते हैं –

चातुर्वर्ण व्यवस्था :

राजतरंगिणी कालीन भारतीय सामाजिक व्यवस्था के अन्तर्गत चातुर्वर्ण का सिद्धांत समाज पर काफी प्रभावशाली था। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र नामक चार वर्ण प्राचीन काल से बारहवीं सदी तक विभिन्न विभिन्न परिवर्तनकारी स्थितियों और चरणों से होकर गुजरे। कल्हण ने ब्राह्मणों को आदर के साथ उल्लेखित किया है। कल्हण स्वयं भी एक ब्राह्मण परिवार में जन्में थे। समाज में ब्राह्मणों का स्थान सर्वोच्च था। समाज के प्रत्येक क्षेत्र में उसकी श्रेष्ठता थी। पूर्वमध्ययुगीन लेखक लक्ष्मीघर और कल्हण ने उल्लेख किया कि राजा के अभिषेकोत्सव में ब्राह्मण प्रमुख रूप से सम्मिलित होता था।

समकालीन अरब लेखक अल्बेरूनी ब्राह्मण की आदिकालीन राजनीतिक स्थिति के विषय में कहता है कि शासन और युद्ध के कार्य ब्राह्मणों के हाथ में थे। तत्कालीन ग्रन्थों में ब्राह्मणों को करों से मुक्त रखने के निर्देश दिए गए हैं। पूर्व मध्य युग में वर्णों के अनुरूप कर्तव्यों में व्यापक परिवर्तन हुए। वर्ण व्यवस्था के विषय में आधुनिक समाज शास्त्रियों के भिन्न–भिन्न मत प्रतिपादित किए हैं। कतिपय समाजशास्त्रियों के अनुसार यह ब्राह्मणों द्वारा ब्राह्मणों के लिए निर्मित व्यवस्था थी जो उनके द्वारा अपनी स्वतन्त्रता, विशिष्ट और विशेषाधिकार सम्पन्न स्थिति

मनोज कुमार, "*राजतरंगिणी कालीन समाज की एक झलक*",
Golden Research Thoughts | Volume 3 | Issue 8 | Feb 2014 | Online & Print

के निर्माण और निरन्तरता के प्रयास की परिचायक थी। प्रशासक वर्ग में राजपूत समाज और राजनीति में आरोपणार्थ 'क्षत्रियत्व' और एक भव्य परम्परा की प्राप्ति के लिए ब्राह्मणों का मुखापेक्षी था। साथ ही क्षेत्रीय विस्तार से आविर्भूत जनजातिय क्षेत्र पर स्थायी अधिकार और जनजातियों के आत्मसात्करण के कार्य में ब्राह्मणों का सहयोग उसके लिए अपेक्षित था। इस दृष्टि से ब्राह्मणों के लिए यह युग अनुकूल था। दूसरी तरफ इस काल में ब्राह्मणों के प्रवजन तथा भूमिदान के अप्रचलन, भक्तिमार्ग और वाममार्गी आन्दोलन के चलते ब्राह्मणों की कर्मकाण्डीय श्रेष्ठता और सामाजिक आर्थिक परिस्थिति को भी कुछ आघात पहुंचा जिसे पुराणों और परवर्ती स्मृतियों ने तीर्थदान की प्रक्रिया को त्वरितता देकर सुदृढ़ करने का प्रयास किया। राजपूत वर्ग का उद्भव यदि एक ओर नयी भूमि व्यवस्था से संबंधित था तो दूसरी ओर स्थानीय रूप से राजनीतिक अस्थिरताजनित सामाजिक गतिशीलता के परिणामस्वरूप कुछ ऐसी कतिपय जातियों का उल्लेख भी मिलता है जो किसी स्त्रोत में राजपूतों और किसी स्त्रोत में शूद्र या अन्त्यजों की श्रेणी में रखे गए थे।

परम्परागत तौर पर समाज में वैश्यों का स्थान तीसरा निर्धारित था। उनका प्रमुख कार्य–कृषि, वाणिज्य और पशुपालन था। ब्राह्मण तथा क्षत्रिय की तरह वैश्यों को भी आपत्तिकाल में दूसरे कर्म अपनाने का निर्देश दिया गया था। समाज में शूद्र का स्थान निम्न था। कालान्तर में पूर्वमध्यकालीन परिवर्तित परिस्थितियों में समाज की एक पृथक इकाई के रूप में शूद्र की सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक व धार्मिक स्थिति में व्यापक परिवर्तन हुए।

जाति–व्यवस्था :

पूर्वमध्यकाल में जातियों का गठन, विकास और विस्तार का आधार मुख्यतः व्यवसाय ही था। जातियों के उद्भव के बारे में यह उल्लेख दिया जाता है कि जातियों का उद्भव वर्णों के पारस्परिक मिश्रण, अवैध विवाह संबंध और कर्तव्यों की उपेक्षा के कारण हुआ। कल्हण ने राजतरंगिणी में अनेक निम्न जातियों का उल्लेख किया है। कल्हण के उल्लेख से यह स्पष्ट होता है कि इन निम्न जातियों का कर्म निम्न था और इनमें किरात, डोम्ब, चण्डाल, शवर, निशाचर, पिशाच, नाग आदि जातियाँ शामिल थी। राजतरंगिणी कालीन समाज में अनुलोम–प्रतिलोम विवाह के कारण भी अनेक मिश्रित जातियों की उत्पत्ति हुई। वैश्य पुरूष और क्षत्रिय स्त्री की गूढ़ सन्तान पशुवृत्ति या जंगली जानवरों का हनन करने वाली कही गई है। ब्राह्मण पुरूष तथा क्षत्रिय स्त्री की गूढ़ सन्तान 'मिषक' होती है और उसकी वृति आयुर्वेद, तन्त्रविधा, ज्योतिष, गणित और कायिक (शरीर विज्ञान) से संबंधित थी। पूर्वमध्यकाल में मुस्लिम आक्रमणों के कारण सांस्कृतिक संक्रमण से सुरक्षार्थ अन्तर्जातीय विवाह और भोज पर दृढ़ता से प्रतिबंध लगाए गए, जिसके कारण जाति व्यवस्था कठोर और गतिहीन होती गई।

अस्पृश्यता :

इस काल के दौरान समाज में अस्पृश्यता का विकास हुआ था। अस्पृश्य वर्ग समूहों में किरात, डोम्ब, चण्डाल, शबर, निशाचर, पिशाच, नाग आदि को शामिल किया गया था। यद्यपि उनके साथ उच्च जातियों के लोगों को सामाजिक आचार व्यवहार करने की अनुमति नहीं थी परन्तु विशेष परिस्थितियों में उन्हें राज्य में निम्न स्तर के व्यवसायों में भी नियुक्त किये जाने के सन्दर्भ इस काल के साहित्य में मिलते हैं। वे प्रायः अपने सामाजिक और धार्मिक जीवन तक ही सीमित रहते थे। वे प्रायः जंगली पशु–पक्षियों का शिकार, मछलियों को पकड़ने और वन्य अर्थव्यवस्था पर ही अपना जीवन निर्वाह करते थे। वे वन से उपलब्ध वस्तुओं को सभ्य समाज के लोगों से वस्तु विनिमय प्रणाली के अन्तर्गत आदान–प्रदान भी करते थे। अन्य निम्न जातियों में लोहकार, धोबी, स्वर्णकार, रज्जक आदि थे जिनकी सामाजिक स्थिति निसन्देह चाण्डालों से बेहतर थी।

नारी की स्थिति :

राजतरंगिणीकालीन समाज में नारी की दशा पूर्ववर्ती युगों की अपेक्षा सर्वाधिक संक्रमणशील थी। यद्यपि गृहस्थाश्रम में एक पत्नी के रूप में उसकी प्रतिष्ठा पूर्ववत् बनी रही। धर्म, अर्थ तथा काम की उपलब्धता का आधार, पत्नी मानी जाती थी। स्त्री गृह–कार्यों के अतिरिक्त अन्य राजनीतिक तथा धार्मिक कार्य भी करती थी। रानी दिद्दा, सुगन्धा तथा सूर्यमति कुशल प्रशासन की परिचायक थी। इन्हीं रानियों ने मठों एवं विहारों का निर्माण कराया जो उस समय की प्रमुख शिक्षण संस्थाएं थी। इसके साथ–साथ कई रानियों ने राजाओं का युद्ध क्षेत्र में भी साथ दिया। राजतरंगिणीकालीन समाज में बाल विवाह समाज में प्रचलित था। इसका एक अन्य प्रमुख कारण पूर्व मध्यकाल में मुस्लिम आक्रमणकारियों का प्रभाव था। कल्हण ने सती प्रथा का उल्लेख किया है। कल्हण ने सती नारियों की प्रशंसा की तथा असती नारियों के प्रति घृणा व्यक्त की। अल्बेरूनी ने विधवाओं की शोचनीय दशा का उल्लेख किया है। उसने सती प्रथा का उल्लेख किया है कि यह केवल राजपरिवारों और क्षत्रिय कुलों तक ही सीमित न रह कर सर्व वर्ण समाज में प्रचलित थी। उसने देवदासी प्रथा के प्रचलन पर प्रकाश डालते हुए लिखा है कि अनेक देवदासियाँ मन्दिरों में नाचने गाने का काम करती थी।

शिक्षा व्यवस्था :

पूर्वमध्य युग में शिक्षा के प्रमुख केन्द्रों के रूप में मठ, मन्दिर, अग्रहार और राज्य–संरक्षित विश्वविद्यालयों का विकास हुआ । बालविवाह प्रथा के प्रचलन के कारण परम्परागत शैक्षणिक जीवन में भी परिवर्तन आये। पूर्वमध्यकाल में मुस्लिमों के आगमन से संभवतः हिन्दू शैक्षणिक जीवन प्रभावित हुआ। हिन्दू शिक्षा प्रणाली के अन्तर्गत शिक्षा केन्द्र के रूप में मठों का विकास इस काल में एक नवीन परम्परा का द्योतक है। अनेक तद्युगीन साहित्यिक और अभिलेखीय साक्ष्यों से इस परम्परा की पुष्टि होती है। राजतरंगिणी में ऐसे अनेकों उदाहरण आऐ हैं जिनमें राजाओं ओर रानियों द्वारा अनेक मठों की स्थापना की गई है। अभिलेखीय साक्ष्यों से भी उद्धृत होता है कि अनेक अग्रहार–संस्थाओं

की व्यवस्था इस समय की गई। प्रायः अग्रहार में एक मन्दिर, एक मठ, एक विद्यालय सत्र, प्रसवशाला व चिकित्सालय आदि अवस्थित थे। राजतरंगिणी में ब्राह्मणों को अनेक अग्रहार दान में देने के सन्दर्भ मिलते हैं।

बौद्ध शिक्षा विहार एवं मठों में दी जाती थी। कालान्तर में इन्हीं विहारों और मठों ने शिक्षा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई तथा पूर्व मध्यकाल में ये बौद्ध शिक्षा के प्रमुख केन्द्रों के रूप में विकसित हुए। इनमें नालन्दा, विक्रमशिला, श्रावस्ती, वल्लभी, राजगृह, वैशाली, कपिलवस्तु, कश्मीर, जालन्धर, मतिपुर तथा कान्यकुब्ज प्रमुख बौद्ध शिक्षा के विश्वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों के रूप में कार्य कर रहे थे।

बौद्ध विहारों एवं मठों की भांति हिन्दू मन्दिर भी विश्वविद्यालयों तथा महाविद्यालयों के रूप में विकसित हुए। इनमें काशी, कांची, कर्नाटक, नासिक जैसे नगर अपने आप विद्या–केन्द्रों के रूप में परिवर्तित होकर विख्यात हुए। तक्षशिला, पाटलीपुत्र, कन्नौज, धारा, अनहिलपाटन और ओदन्तपुरी हिन्दू शिक्षा के प्रमुख शिक्षा केन्द्रों के रूप में स्थापित हुए। इन शिक्षा केन्द्रों में अनेक विषयों में शिक्षा दी जाती थी। वेद, इतिहास, पुराण, व्याकरण, भूत विद्या, क्षात्र विद्या, तर्कशास्त्र, निरूक्त, छन्द, नक्षत्र विद्या, ज्योतिष तथा राशि आदि विभिन्न विषयों की शिक्षा प्रदान की जाती थी। इसके अतिरिक्त इस काल में व्यवसायिक शिक्षा भी दी जाती थी।

शिक्षा के केन्द्र के रूप में प्राचीन गुरूकुल और आश्रम प्रणाली का स्थान मठ, मन्दिर, अग्रहार तथा राज्य संरक्षित विश्वविद्यालय ग्रहण कर रहे थे। ये मठ–मन्दिर धार्मिक प्रवृति के साथ ही राजनीतिक अभिलाषा के परिचायक थे। राज्याश्रय प्राप्त ये शिक्षा केन्द्र के साथ–साथ ब्राह्मणीक व्यवस्था के विस्तार के महत्वपूर्ण माध्यम भी थे।

विवाह व्यवस्था :

पूर्व कालों की भांति इस काल में भी गृहस्थ जीवन का प्रारम्भ विवाह से माना गया था। वास्तव में राजतरंगिणी काल में अन्य सामाजिक संस्थाओं की भांति विवाह संस्था में भी अनेक परिवर्तन हुए थे । राजपूत वंशों की उत्पति के कारण उनके परिवारों में लड़की के जन्म को अशुभ माना जाता था। इस काल में बाल्यकाल में ही लड़की का विवाह कर दिया जाता था। सजातिय विवाह ही समाज में अधिक प्रचलित थे। विवाह संस्था में परिवर्तनों के लिए आन्तरिक विघटनकारी तत्वों के अतिरिक्त ब्राह्य तत्वों में मुस्लिम आक्रमण मुख्यतयाः उत्तरदायी थे। पूर्व मध्यकाल में भी पहले की भांति अनुलोम तंथा प्रतिलोम विवाहों का प्रचलन था। ऐसे विवाहों का उल्लेख राजतंरगिणी में भी दिया गया हैं ।

परिवार व्यवस्था :

प्रत्येक व्यक्ति अपना जीवन परिवार के अधिकार और कर्तव्यों के बीच व्यतीत करता है। प्राचीन हिन्दू परिवार की प्रमुख विशेषता संयुक्त परिवार व्यवस्था रही है। ग्रामीण अर्थव्यवस्था एंव समाज के चलते पूर्वमध्यकाल में भी संयुक्त परिवार व्यवस्था प्रचलित थी। परन्तु वैदिककाल की तुलना में परिवार के मुखिया के अधिकारों में निशिचत तौर पर पतन हुआ था जबकि परिवार के लड़कों को अधिक स्वतन्त्रता उपलब्ध थी ।

आश्रम व्यवस्था :

पूर्वमध्ययुगीन धर्मशास्त्रों में आश्रम व्यवस्था के परम्परागत स्वरूप का विशद उल्लेख मिलता है। इस काल में भी पूर्व की भांति जीवन को गुणात्मकता के आधार पर कई भागों में विभाजित कर आश्रमों की प्रतिष्ठता की गई। मनुष्य के जीवन को कर्म के अनुसार व्यवस्थित करने के लिए चार आश्रमों की व्यवस्था की गई थी ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास। ब्रह्मचर्य आश्रम के अन्तर्गत ब्रह्मचारी दिन में तीन बार स्नान, सुबह–शाम होम, गुरू की पूजा, उपवास करना, भिक्षा मांगना आदि प्रमुख कार्य करता था। गृहस्थ आश्रम में व्यक्ति सामाजिक जीवन का अध्ययन, पुरूषार्थो की पूर्ति, ऋणों से उऋण होना तथा पंच महायज्ञ करता था। वानप्रथ वस्तुतः जीवन के अन्तिम लक्ष्य मोक्ष प्राप्ति के पूर्वाभ्यास का काल था। सन्यास आश्रम के अन्तर्गत संन्यासियों के निवास तथा शिक्षा केन्द्र के रूप में मठों की परम्परा का विकास इस युग की विशेषता थी। इस काल में सन्यास की अनुमति मुख्यतः ब्राह्मणों को ही प्रदान की गई थी।

संस्कार व्यवस्था :

मनुष्य के व्यक्तित्व के विकास के लिए हिन्दू समाज में संस्कारों की व्यवस्था उतर वैदिक काल से ही चली आ रही थी। अनेक परिवर्तनों के बाद भी इस काल के समाज में संस्कार एक सामाजिक संस्था के रूप में विद्यमान थे। संस्कारों के विभिन्न क्रमिक रूप जन्म से पहले से आरम्भ होकर उसकी मृत्यु तक निरन्तर बने रहे। ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य से पता चलता है कि संस्कारों की संख्या विद्वानों ने अलग–अलग बताई है। आन्तरिक और बाह्य शुद्वता, नैतिकता और आध्यात्मिकता तथा जीवन की परिशुद्धता और पवित्रता इन्हीं के माध्यम से मानी गई है। कल्हण कालीन समाज में संस्कार वैश्य तथा शूद्र वर्ण के लिए वर्जित घोषित कर दिए गए थे। वास्तव में इन्हें अब ब्राह्मण तथा क्षत्रिय वर्ण के लिए ही मान्य बताया है।

पुरूषार्थ व्यवस्था :

भारतीय जीवन दर्शन के मूल में भौतिकता और आध्यात्मिकता के बीच समन्वय और सन्तुलन का प्रयास दिखाई पड़ता है। पुरूषार्थ इस प्रयास का परिचायक है। इस युग में चारों पुरूषार्थों में धर्म नियंत्रणकारी तत्व के रूप में पहले के विपरीत क्षीण हो रहा था। पूर्व कालों की भांति इस काल के विचारकों ने भी पुरूषार्थों से मनुष्य के व्यक्तित्व का विकास माना है।

दास–प्रथा :

पूर्वमध्यकाल में सामन्तीय अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत सामन्तों अथवा अभिजात्य वर्ग के लोगों के अनेक दास होते थे जो उनके अधीन कृषि कार्य तथा घरेलू कामों में लगे रहते थे। पूर्व कालों की भांति इस काल के समाज में भी दासों के अनेक प्रकार थे जिनमें आत्मविक्रयी दास, उदर दास, प्रक्षेपानुरूप दास, दण्डप्रणीत दास, ध्वजाहृत दास, दाय भाग में प्राप्त दास, गर्भवती दासी से उत्पन्न दास आदि शामिल थे। स्वामियों द्वारा दासों के प्रति किया जाने वाला व्यवहार उसके स्वभाव पर निर्भर करता था। मुस्लिम आक्रमणों के कारण इस काल में दासों की संख्या में भारी वृद्धि होना एक ऐतिहासिक घटना कही जा सकती है। दासों की भांति दासियों से संबंधित मिले सन्दर्भ इस तथ्य के द्योतक हैं कि दासियों को रखने का प्रचलन पूर्व कालों की भांति कल्हणकालीन समाज में भी बना रहा। व्यापारी लोग प्रायः उन्हें खरीद कर अपनी दासी बना लेते अथवा गृहकार्यों में लगा देते थे। कई बार उनके स्वामी उनसे शारीरिक संबंध स्थापित कर उनसे विवाह भी कर लेते थे। फलस्वरूप नियमानुसार उन्हें परिवार सहित दासत्व से मुक्ति मिल जाती थी।

निष्कर्ष :

राजतरंगिणी कालीन समाज के उपरोक्त विवेचन के आधार पर निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि वैदिक काल से शुरू हुई व्यवस्थाऐं ज्यों–ज्यों समय के बहाव में बह रही थी वैसे–वैसे उनमें परिस्थितियों के कण भी शामिल होते जा रहे थे। जैसे चातुर्वर्ण व्यवस्था भले ही चार स्तंभों के रूप में वैसे ही थी लेकिन अब शूद्र का वह स्थान नहीं था जो सूत्रकाल में कलयुग कहलाता था। इस तरह निम्न जातियां अब राजा के सानिध्य में उच्च पद प्राप्त कर सकती थी, न कि अब उनके हाथ की भिक्षा न ग्रहण करने जैसी व्यवस्था पूर्ण रूप से लागू थी। इसी तरह कई नई जातियां अपना आकार ले चुकी थी जिनके कार्य व स्थिति का सही आंकलन करना वैदिक शर्तों पर तो बिल्कुल नामुमकिन था। आश्रम व्यवस्था की बात करें तो वानप्रस्थ व सन्यास आश्रम अब ब्राह्मण वर्ण तक ही सीमट गये थे। वास्तव में आश्रम व्यवस्था के प्रति समाज अब उदासीन हो चुका था। स्त्री दशा की बात एक लाइन में करें तो यह पतन की ओर बहाव लिऐ हुए थी। इसके लिऐ बाह्य आक्रमण ही चाहे कुछ हद तक जिम्मेदार क्यों न हों। शिक्षा के क्षेत्र में पहले से विस्तार अवश्य हुआ लेकिन व्यापक तौर पर सभी व शूद्र अब भी द्विज वर्ग से पिछड़े ही रहे लेकिन बौद्ध मठों ने उन्हें कुछ रियायतें अवश्य दी। आश्रम व्यवस्था के लक्ष्य भले ही वही थे लेकिन उसके चरणों में काफी तबदीलियां आ चुकी थी। विवाह व्यवस्था अपने बाल विवाह की प्रवृति की ओर अग्रसर होने लगी थी सजातीय विवाह पर अधिक जोर दिया जाने लगा था क्योंकि राजपूत समाज खून की शूद्धता में विश्वास रखता था जो इस काल का मुख्य वर्ण था। बहुपत्नी प्रथा भी विद्यमान हो चुकी थी। परिवार संयुक्त रूप में लोक कल्याणकारी धारा में प्रवाहित हो रहे थे। मुस्लिम आक्रमणें का समाज के अन्य पक्षों पर पड़ रहे प्रभाव की तरह दास प्रथा को भी संख्या वृद्धि के रूप में प्रभावित कर रहा था। इस प्रकार समाज उपरी तौर पर सदियों से चले आ रहे ढर्रे पर रह कर भी आंतरिक रूप से प्राचीन सीमाओं से बाहर अंगड़ाई ले रहा था।

सन्दर्भ

1.राजतरंगिणी 1,21,22, पृ. 18
2.पी. वी. काणे, धर्मशास्त्र का इतिहास, 11, पृ. 131
3.बी.डी. चट्टोपाध्याय, ओरिजिन ऑफ राजपूत, पृ. 71
4.जयशंकर मिश्र, पृ.117
5.राघवेंद्र पांथरी, प्राचीन भारत में सामाजिक परिवर्तन, पृ. 91
6.कथासरितसागर 1, पृ. 33–36
7.राजतरंगिणी 1, 272, 320–321, पृ. 283, 320–321
8.ई.सी. सचाऊ, अल्बेरूनी इंडिया, II, पृ. 157
9.जयशंकर मिश्र, पृ. 559
10.राजतरंगिणी, BII, 120, पृ. 30
11.एल.एल. बुद्धिस्ट रिकार्ड ऑफ दि वेस्टर्न वर्ल्ड, पृ.70–71
12.एनि. इंडि. XIX, पृ. 299
13.जयशंकर मिश्रा, पृ. 172
14.पी.एन. प्रभु, हिन्दू सोशल ओरगनाइनेशन, पृ. 149
15.ई.सी. सचाऊ, अल्बेरूनी इंडिया, II, पृ० 156
16.एस.एस. सहाय, हिन्दू सामाजिक संस्थाऐं एवं आर्थिक जीवन, पृ. 191
17.के.एम. कपाड़िया, मैरिज एण्ड फैमिली इन इण्डिया, पृ. 27
18.जयशंकर मिश्र, पृ. 119
19.ई.सी. सचाऊ, पृ. 131
20.राघवेंद्र पांचरी, पृ. 266
21.कार्पस इंसक्रिप्शनम इंडिकार्य, I, ृ. 158

22.पी. वी. काणे, धर्मशास्त्र का इतिहास, I, पृ. 192
23.राजबली पांडेय, हिंदू संस्कार, पृ. 19

Publish Research Article
International Level Multidisciplinary Research Journal
For All Subjects

Dear Sir/Mam,

We invite unpublished Research Paper,Summary of Research Project,Theses,Books and Book Review for publication,you will be pleased to know that our journals are

Associated and Indexed,India

- International Scientific Journal Consortium
- OPEN J-GATE

Associated and Indexed,USA

- EBSCO
- Index Copernicus
- Publication Index
- Academic Journal Database
- Contemporary Research Index
- Academic Paper Databse
- Digital Journals Database
- Current Index to Scholarly Journals
- Elite Scientific Journal Archive
- Directory Of Academic Resources
- Scholar Journal Index
- Recent Science Index
- Scientific Resources Database
- Directory Of Research Journal Indexing

Golden Research Thoughts
258/34 Raviwar Peth Solapur-413005,Maharashtra
Contact-9595359435
E-Mail-ayisrj@yahoo.in/ayisrj2011@gmail.com
Website : www.aygrt.isrj.net